मैं आप का ध्यान दो एक सावधानियों की ओर आकृष्ट करूंगा कि आवेश में आ कर या झगड़े में पड़ कर पति-पत्नी अप्रसन्न हो कर एक दूसरे से विवाह-विच्छेद करना चाहेंगे । पर समाज और विधि दोनों को ऐसे क्षणिक आवेश को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए । संशोधन संख्या ९७ को देखने से ज्ञात होगा कि इसी कारण स्त्री पुरुष दोनों को पहले एक वर्ष अलग रह कर बाद में यह बताना पड़ेगा कि वह साथ-साथ नहीं रह सकते; तभी उन का विवाह-विच्छेद स्वीकार किया जायेगा ।

अतः यह दो शर्तें ही पर्याप्त नहीं हैं । एक तीसरी शर्त का होना भी आवश्यक है । अतः जब यह तीनों शर्तें कि साल भर से वे अलग रह रहे हों, वे साथ रहना भी नहीं चाहते और अलग होने के लिए दोनों सहमत हों, पूर्ण न हों तब तक कोई भी याचिका विवाह-विच्छेद के लिए स्वीकार न की जाये । पति-पत्नी दोनों में से केवल एक ही याचिका प्रस्तुत नहीं कर सकता बल्कि इस के विपरीत अनिवार्य रूप से दोनों को मिल कर ही याचिका प्रस्तुत करनी पड़ेगी । सभा में उपस्थित मेरी बहनों को शायद कुछ गलतफहमी हो सकती है कि ऐसी सम्मति क्रूरता, छल बल प्रयोग या किसी अनुचित प्रभाव से भी ली जा सकती है । मैं उन को बताना चाहता हूं कि यह बात आधारहीन है क्योंकि उन को एक वर्ष तक अलग रहना पड़ेगा । क्या एक वर्ष तक यह क्रूरता, छल और बल प्रयोग जारी रह सकेगा ? फिर, न्यायालय याचिका पर तुरन्त तो आज्ञा नहीं देगा वह उस को एक वर्ष के लिए स्थगित करेगा ।

पंडित ठाकुर दास भार्गव : आवेदक केवल पति-पत्नी होंगे । जांच किस बात की की जायेगी ? दोनों सच्चाई स्वीकार कर लेंगे ।

श्री वेंकटरामन : जब पति-पत्नी दोनों न्यायालय में आकर कहेंगे कि हम दोनों एक साल से अलग अलग रह चुके हैं और हम अलग रहना चाहते हैं तो आप स्वयं सोचिये कि जब वे अलग-अलग रह रहे हैं तो कैसे एक दूसरे पर बल, कपट या किसी अन्य अनुचित तरीके का प्रभाव पड़ सकता है । फिर संशोधन संख्या ५२० से प्रकट है कि न्यायालय को जब यह सन्तोष हो जायेगा कि सम्मति किसी भी अनुचित प्रकार से नहीं ली गई है तभी वह विवाह-विच्छेद की आज्ञा देगा ।

मेरी समझ में नहीं आता कि इस खण्ड से लोगों को क्यों इतनी उत्तेजना हो रही है जब कि पति-पत्नी में से एक का दूसरे को छोड़ देने या एक द्वारा विवाह-विच्छेद के लिये याचिका देने पर विवाह-विच्छेद की स्वीकृति दी जा सकती है और किसी बल प्रयोग, कपट या अनुचित प्रभाव के सम्बन्ध में कोई जांच भी नहीं की जाती । मैं कहना चाहता हूं कि यह केवल भ्रम है ।

खण्ड ३३ पर एक दूसरे संशोधन के बारे में भी मैं कुछ कहूंगा । श्री आचार्य कृपालानी ने कहा कि न्यायालय पति-पत्नी में समझौते का प्रयत्न करें और मामले को तीन व्यक्तियों की बनी समिति के सुपुर्द कर दिया जाये । मैं सहमत हूं कि पति-पत्नी में समझौता कराने का प्रयत्न न्यायालय अवश्य करे, पर मामले को समिति के सुपुर्द करने में कार्यवाही बड़ी लम्बी-चौड़ी हो जायेगी । इसलिए इसी सम्बन्ध में मेरा संशोधन संख्या ५२१ स्वीकार किया जाय जो आवश्यकता की पूर्ति कर सकेगा ।

खण्ड (ङ), (च) और (छ) में पागलपन, गुप्त बीमारी और कोढ़ के मामलों में कम से कम ५ वर्ष का समय रखा गया है कि इस के पूर्व विवाह-विच्छेद की याचिका नहीं दी जा सकती । मैं इस समय को तीन वर्ष करने वाले किसी भी संशोधन का हृदय से अनुमोदन करूंगा । ५ वर्ष का निरन्तर समय बहुत अधिक होगा; इस से लोगों को इस अधिनियम के अन्तर्गत कोई सहूलियत नहीं मिलेगी ।

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य एवं रक्षा मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : उपाध्यक्ष महोदय, प्रस्तुत खण्ड पर बोलते हुए

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

कल आचार्य कृपलानी ने खण्ड के प्रथम भाग अर्थात् (क) की ओर ध्यान आकर्षित किया था और उन्हों ने कहा था कि संयोगवश की गई भूल से इन परिणामों का उद्भव दुर्भाग्य में होगा। उन्हों ने जो यह प्रश्न उठाया है उस के अतिरिक्त प्रश्न के प्रति उन के व्यापक दृष्टि-कोण से मैं सर्वथा सहमत हूं। लेकिन यहां प्रश्न अनेक वस्तुओं की गणना करना नहीं है। अन्तोत्गत्वा जो प्रश्न उठता है वह यह है कि जब दो व्यक्ति परस्पर मिल कर काम नहीं कर सकते ह,—कारण कुछ भी हो,—ऐसी स्थिति में क्या किया जाये ? मैं एक नहीं, किन्तु अनेक भूलें क्षमा करने के लिये तैयार हूं पर इस असहनीय अवस्था को कभी भी क्षमा करने के लिये तैयार नहीं हूं कि दो व्यक्ति परस्पर एक दूसरे के आलम्बन को घृणित समझने लगें। अतः मैं इस खण्ड का यहां स्वागत करता हूं। एक दूसरे की सम्मति द्वारा विवाह-विच्छेद के सम्बन्ध में मेरे साथी श्री वेंकटरामन् द्वारा प्रस्तुत संशोधन का मैं विशेष रूप से स्वागत करता हूं। राज्य-सभा ने इसे दूसरे रूप में प्रस्तुत किया है। मेरा विचार है कि प्रस्तावित संशोधन में सुझाया गया रूप—मेरा विश्वास है कि यह श्री वेंकटरामन् और श्री रघुरामैया का संशोधन सं० ९७ है—कई कारणों से अच्छा उपाय है। मैं पूर्ण रूप से सहमत हूं कि इस प्रकार के विषय में विवाह-विच्छेद तथा पृथक्करण के लिये अन्तिम कारण यही है कि दो व्यक्ति, साथ साथ शान्ति और सौहार्द्रपूर्वक नहीं कर सकते हैं। इस के साथ ही उन्हें भावावेश में ऐसा निर्णय नहीं करने देना चाहिये जिस से उन के जीवन पर प्रभाव पड़ता हो। इसलिये उन्हें पुनर्विचार और समझौते आदि के लिये समय देना चाहिये। अतः मैं एक वर्ष की अवधि देने वाले संशोधन का समर्थन करता हूं। विधेयक के दूसरे भाग में भी एक खण्ड है और मेरा विश्वास है कि दो संशोधन हैं, मेल कराने और भले कराने के प्रयत्न के सम्बन्ध में, एक आचार्य कृपालानी और एक श्री वेंकटरामन का—यह दो संशोधन हैं। इस प्रकार के प्रयत्नों को मैं बहुत अधिक महत्व देता हूं। मेरा विचार है कि सर्वोत्तम मार्ग यह है कि न्यायालय को इस प्रकार के प्रयत्नों की अनुमति दी जाये। न्याया-लय जैसा चाहे वैसी कार्यवाही कर सकता है। इस के लिये कोई कारण नहीं है कि न्यायालय आचार्य कृपालानी के सुझाव के अनुसार कार्यवाही न करे। लेकिन इस विषय में नमनशीलता महत्वपूर्ण है एक कठोर प्रक्रिया द्वारा न्यायालय को जकड़ने से इच्छित उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी। प्रश्न यह है कि हमारे पास एक निश्चित प्रक्रिया होनी चाहिये और उस की कार्यान्विति के लिये न्यायालय से निश्चित रूप से निदेशित कराना चाहिये।

मेरा अनुमान है कि विवाह-विच्छेद और विवाह-विच्छेद की अनुमति की वांछनीयता के सम्बन्ध में युक्तियां उपस्थित करने के लिये अब पर्याप्त विलम्ब हो गया है, मैं इस सम्बन्ध में अधिक नहीं कहूंगा। हम ऐसे सम्बन्ध पर चर्चा कर रहे हैं जो असाधारण रूप से कोमल और जटिल है; प्रायः यह मधुरिमापूर्ण होता है, कभी कभी यह अत्यन्त भयावह हो सकता है। हम विवाह के सम्बन्ध में और विवाह-विच्छेद के सम्बन्ध में बातें करते हैं। मुझे लगता है कि इन सब बातों के दौरान एक विषय हमारे मस्तिष्क में है—यह काम भावना का सम्बन्ध है जो स्वभावतः विवाह का एक अंग है। लेकिन विवाह काम-सम्बन्ध से बढ़ कर कुछ और है। विवाह परस्पर सहयोग है; मैत्री है; यह एक दूसरे को सहायता देना और सब प्रकार के कठिन कार्यों में सहयोग देना है। मैं काम-भावना का महत्व कम नहीं कर रहा हूं लेकिन मेरा अभिप्राय यह है कि विवाह काम-व्यापार से बढ़कर कुछ और भी है। विवाह का अर्थ रात दिन वासना में लिप्त रहना ही नहीं। कुछ माननीय सदस्यों ने कहा

कि विधवा को विवाह नहीं करना चाहिये । मेरी समझ में यह बात नहीं आती है । इस का अर्थ यही है कि आप काम की दृष्टि से ही विचार कर रहे हैं । मैं इस दृष्टिकोण का विरोध करता हूं ।

कदाचित समस्त समस्याएं—समस्त मानवीय समस्याएं, मानवीय सम्बन्ध द्वारा हल की जा सकती हैं; वैयक्तिक, घरेलू, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय ; व्यक्ति का व्यक्ति से सम्बन्ध, व्यक्ति का समूह से सम्बन्ध और समूह का समूह से सम्बन्ध—यह सब मानवीय सम्बन्ध पर आश्रित हैं । यह सब वस्तुएं विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत आ जाती हैं । सहस्रों वर्ष बीत जाने पर भी यह सम्बन्ध अभी सुगम रूप में नहीं है। यह कठिनाइयों से भरा हुआ है और पर्याप्त दुर्बोध है । व्यक्ति अथवा समूह के अधिक भावुक और अधिक प्रगतिशील हो जाने पर कठिनाइयां और कदाचित् सफलताएं बृहद् रूप धारण कर लेती है क्योंकि तब आप किसी एक पक्ष को बौद्धिक, मानसिक, शारीरिक अथवा अन्य किसी रूप में दूसरे पक्ष के आश्रित रख कर अथवा उस की परछाईं-मात्र बनकर अपना व्यक्तित्व खोना पसन्द नहीं करेंगे । उन्नत मानव का अर्थ है हृदय की विशालता, एक दूसरे को समझने का सामर्थ्य और सहनशीलता—भूलों तथा गलतियों के प्रति सहनशीलता जो सफलता के लिये आवश्यक है । किन्तु यदि आप उन्हें ऐसे दो प्राणियों की भांति समझें जो प्रायः काम वासना में लिप्त रहने के अतिरिक्त कुछ नहीं करते हैं तो कदाचित् कठिनाइयां सीमित हो सकती हैं । लेकिन यदि आप व्यापक दृष्टिकोण अपनायें—जैसा कि आप को करना चाहिये—तब विधि की दृष्टि से इस प्रश्न की प्रागणना ही नहीं करना है । जब कोई व्यक्ति अपराध करता है तब विधि हेतु आप उपबन्ध की व्यवस्था करते हैं लेकिन अन्ततोगत्वा प्रश्न सुखी विवाहों को प्रोत्साहित करने के उपाय ढूंढने के सम्बन्ध में है ।

बहुत से व्यक्तियों का विचार है कि विवाह-विच्छेद के उपबन्ध से आप विवाह की पद्धति को ही विच्छिन्न कर रहे हैं । मैं पूर्ण रूप से संतुष्ट हूं कि विवाह-विच्छेद के उपबन्ध से आप सामान्यतया सुखी विवाहों का आह्वान कर रहे हैं । मैं व्यक्तिगत मामलों के सम्बन्ध में नहीं कह रहा । लोग विधि का उपयोग अथवा दुरुपयोग कर सकते हैं अथवा विधि की अनुपस्थिति में वह उन कार्यों को कर सकते हैं जो उन्हों ने पहले किये हैं ।

प्रायः हम से कहा जाता है कि यह हमारे मूलभूत विचारों और परम्पराओं व हिन्दू समाज के विरुद्ध है । मुझे लगता है कि इस रूप में कुछ भी कहा जा सकता है क्योंकि हिन्दू समाज इतना व्यापक एवं विशाल है कि आप ऐतिहासिक दृष्टि से अथवा यथार्थ दृष्टि से इस के बारे में कुछ भी कह सकते हैं । जब हम हिन्दू समाज के विषय में बातचीत करते हैं तो क्या हमारा अभिप्राय ऊंची जाति के इने-गिने व्यक्तियों से है अथवा बीस या तीस करोड़ व्यक्तियों से—इस देश में हिन्दुओं की जो भी संख्या हो । जब हम संख्या के आधार पर दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित करना चाहते हैं, तो हम चिल्लाते हैं । इस देश में हम २७ करोड़ हिन्दू हैं लेकिन जब हम सीधी बात कहते हैं और सुधार की बात करते हैं तब ऊंची श्रेणी के थोड़े से व्यक्तियों के विषय में विचार करते हैं । आप इसे दोनों ओर नहीं कर सकते हैं । इस के अतिरिक्त और क्या विचार हो सकता है । सम्पूर्ण आदर के साथ मैं कह सकता हूं कि आप की मनु अथवा अन्य किसी व्यक्ति के कठोर नियमों और उपनियमों को ही नहीं पढ़ना चाहिये । यद्यपि उन में भी आप को वैचित्र्य मिलेगा । अपितु आप को सामाजिक जीवन का अध्ययन करना चाहिये, जैसा कि

[श्री जवाहरलाल नहरू]

वह पिछले जमाने में हमारे देश में निर्मित हुआ है। हम अनेक रूपों में इस का अध्ययन कर सकते हैं; कदाचित् अच्छा तरीका यह है कि हम सामाजिक जीवन की उन झलकों की ओर देखें जो प्राचीन पुस्तकों में मिलती हैं। हमारे सब से प्राचीन नाटक 'मृच्छकटिक' को लीजिये। यदि आप ने नहीं पढ़ा है तो अवश्य पढ़िये। मानव-जीवन की जिन कोमल वृत्तियों का उस में वर्णन किया गया है उसे पढ़िये। उस में किसी स्त्री अथवा पुरुष के प्रति कठोर नीति और दंड का विधान नहीं है प्रत्युत जीवन की कठिन समस्याओं के प्रति मानवीय दृष्टिकोण अपनाया गया है।

संभवतः 'मृच्छकटिक' की रचना ईसा की पांचवीं शताब्दी में की गई थी, अर्थात् आज से लगभग १४०० वर्ष अथवा इस से भी अधिक वर्ष पूर्व। आप इसे किसी अंश तक नाटक कह सकते हैं, इस में कृत्रिमता नहीं है। जिस व्यक्ति ने इस की रचना की उस ने इस में युग का प्रतिबिम्ब चित्रित कर दिया है। यदि आप उस नाटक को पढ़ें तो आप एक ऐसा समाज देखेंगे जो अत्यधिक सुसंस्कृतज्ञ और अत्यन्त विकसित रूप में है। उस में व्यक्ति का विकसित रूप है। व्यक्ति का विकास लम्बी-चौड़ी बातें कहने, विशालता की चर्चा करने और उस का ढोल पीटने में निहित नहीं है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कैसा व्यवहार करता है यही उस का मापदण्ड है। यक्ति की कसौटी इस में है कि वह अपने पड़ोसी, अपनी पत्नी अथवा अन्य किसी व्यक्ति से किस प्रकार व्यवहार करता है। उस का अन्य व्यक्ति से कैसा व्यवहार है, सामाजिक सम्बन्ध में उस का क्या स्थान है,—इन पर व्यक्ति की परख अवलंबित है। यदि आप इस कसौटी से देखें तो आप को मालूम होगा कि हमारे देशवासी आश्चर्यजनक रूप में प्रगतिशील थे और उन का दृष्टिकोण उदार तथा सहनशीलता से युक्त था।

मैं मापदण्ड के सम्बन्ध में कह रहा था। एक और मापदण्ड है। आदिमकाल के समाज में अंधविश्वासों और प्रतीकों का बोलबाला था। मैं इन के विरुद्ध कुछ नहीं कहना चाहता हूं। लेकिन सामान्यतया अंधविश्वास और शकुन आदिम युग के उदाहरण हैं। समाज जितना अधिक विकसित होता है उस की आस्था अंधविश्वासों में उतनी ही कम होती है। क्योंकि उन का स्थान आत्मसंयम ले लेता है और पुलिसमैन का डंडा तिरोहित हो जाता है। मैं ने इस शब्द का प्रयोग किया है: आप अपनी इच्छानुसार इसे व्यवहृत कर सकते हैं। लेकिन सिद्धान्त वही है। अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में समस्याओं का हल करने के लिये आप युद्ध अथवा युद्ध-सरीखी किसी भी घटना को टालने का प्रयत्न करते हैं। राष्ट्रीय मामलों में आप शान्तिपूर्वक समस्याओं का हल करना चाहते हैं। इसी तरह घरेलू मामलों में भी, पति और पत्नी के कलह में भी आप यह नहीं चाहते हैं कि आप के विवाद में निधि का प्रयोग किया जा कर प्रत्येक कार्य के लिये आप को दण्ड दिया जाये। मैं नहीं समझता कि हम अन्तर्राष्ट्रीय अथवा राष्ट्रीय मामलों में इस से मुक्त हो सकते हैं। यह एक पृथक विषय है। लेकिन सिद्धान्त वहीं है। हिंसा के प्रयोग से दूर रहना समाज और राष्ट्र की सांस्कृतिक उन्नति का द्योतक है। यदि दूसरे मामलों में ऐसा है तो परिवार के आन्तरिक दायरे में यह और भी आवश्यक है। पति और पत्नी, पिता और उस के बच्चों के बीच पुलिस के डंडे की सहायता की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। डंडे से मेरा अभिप्राय उस विधि से है जो प्रीड़न करती है, विवश कर देती है और जो वर्तमान अवस्था की भांति एक पक्ष को दंडित करती है। इस में कोई सन्देह नहीं है कि हमारी विधियां, हमारे रीति-रिवाजों का मैं उच्च वर्ग के विषय म कह रहा हूं—स्त्री समाज को भारी मूल्य चकाना पड़ता है। इसीलिये हम अन्य विधान का पुरः स्थापन

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

परस्पर सम्मति से विवाह-विच्छेद करना केवल एक बहाने के रूप में आदिष्ट नहीं हो सकता। कुछ लोगों ने कहा है कि इसका नतीजा यह निकलेगा कि पति अपनी पत्नी की सम्मति प्राप्त करने के लिये बल का प्रयोग करेगा। यह असम्भव नहीं है किन्तु यदि उन में समझौता कराने की अवधि बढ़ा दी जाय तो ऐसा नहीं होगा। इतने पर भी यदि पति ऐसा बर्ताव करता है तो ऐसे पति से पत्नी को जितनी जल्दी छुटकारा मिल सके उतना ही अच्छा है। इन शब्दों के साथ मैं श्री वेंकटरामन् तथा श्री रघुरामैया के संशोधन का समर्थन करता हूं।

श्री ए० एम० थामस (एरणाकुलम्) : राज्यसभा द्वारा स्वीकृत खण्ड के लिये मेरी जो प्रतिक्रिया है यह उस के पक्ष में नहीं है। प्रवर समिति के सदस्य भी उस के पक्ष में नहीं हैं, यह उन के प्रतिवेदन से स्पष्ट ज्ञात हो सकता है। अतः श्री वेंकटरामन् का संशोधन, बिना किसी संरक्षण की शर्त के पारित नहीं हो सकता। उन्होंने तथा कुछ अन्य सदस्यों ने बताया कि देश के कुछ भागों में, विशेषतया मालाबार में, यह विधि प्रचलित है। मैं भी वहां का निवासी हूं किन्तु मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि वहां की स्थिति कुछ और है। वहां के नियम तथा उस राज्य की स्थिति अन्य राज्यों से पृथक् है।

श्री वेलायुधन (विवलोन व मावेलिक्करा—रक्षित—अनुसूचित जातियां) : वे जरा आगे बढ़ गये हैं।

श्री ए० एम० थामस : उस राज्य में स्त्रियां ऊंची स्थिति में हैं क्योंकि उत्तराधिकार मातृपक्ष में चलता है, किन्तु अन्य राज्यों में परस्पर सम्मति के उपबन्ध से स्त्रियों की दुर्गति हो जायगी। ट्रावनकोर-कोचीन में पहले से ही ऐसी प्रथाएं चली आ रही हैं और विधि ने तो केवल उन्हें मान्यता दी है।

कुमारी एनी मैस्करीन (त्रिवेन्द्रम) : क्या मरुमक्कट्टयम् विधि वहां अब भी है ? ट्रावनकोर में तो नहीं है; कोचीन में ही है।

श्री ए० एम० थामस : मेरा अभिप्राय यह है कि जहां तक विधि है वहां भी इस के प्रति असन्तोष है। श्री चटर्जी ने अपने भाषण में ठीक ही कहा है कि विवाह एक संस्कार है।

उपाध्यक्ष महोदय : शान्ति, शान्ति। कुछ माननीय सदस्य बातें कर रहे हैं। इस से सभा की कार्यवाही में अन्तर्बाधा पड़ती है।

श्री ए० एम० थामस : यह विधेयक एक प्रकार से परस्पर सम्मति के विवाह का करार है फिर भी खण्ड १२ के परन्तुक से प्रकट है कि विवाह करार से ऊंची बात है।

आप ने जब भाषण दिया तो आप ने हिन्दू विवाह के समय पढ़े जाने वाले कुछ सूत्रों को उद्धृत किया। ईसाइयों में भी ठीक इसी अर्थ के शब्द विवाह के समय कहे जाते हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि वैवाहिक पवित्रता पर राष्ट्र का चरित्र निर्भर है। अतः यदि परस्पर सम्मति का खण्ड अपनाया भी जाय तो उस के साथ पूरा संरक्षण होना चाहिए। मैं इस खण्ड का विरोध करता हूं, फिर भी यदि यह खण्ड स्वीकृत हो, तो श्री वेंकटरामन के संशोधन के आधार पर हो।

श्री फ्रैंक एंथानी (नामनिर्देशित—आंग्ल-भारतीय) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं परस्पर सम्मति द्वारा विवाह-विच्छेद के सिद्धान्त का समर्थन करता हूं, किन्तु उस के साथ आवश्यक संरक्षण होना चाहिए।

पहली कठिनाई तो यह है कि यह उपखंड वैधिक दृष्टि से तथा व्याकरण की दृष्टि से भी मुझे शुद्ध नहीं जान पड़ता। मैं नहीं जानता कि इस खण्ड के निर्माण का श्रेय किस को है ?

एक माननीय सदस्य : यहां तो कोई मंत्री भी नहीं है।